International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

'यथा प्रस्तावित' उपन्यास में रोज़गार की समस्या

डॉ. सुभाष चंद्र

सह आचार्य, (हिन्दी), राजकीय महाविद्यालय किश्तवाड़, जम्मू एंड कश्मीर, पिन कोड. 182204

सारांश

प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार गिरिराज किशोर द्वारा रचित उपन्यास 'यथा प्रस्तावित' में भारतीय कार्यालय व्यवस्था, सामाजिक असमानता और दलित वर्ग के शोषण का यथार्थ चित्रण किया गया है। इस उपन्यास में रोज़गार की समस्या को सरकारी कार्यालयों में व्याप्त जातिवाद, भेदभाव, पक्षपात और भ्रष्टाचार के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास का मुख्य पात्र एक दलित कर्मचारी है जिसका नाम बालेसर है, जिसे नौकरी करने के बावजूद अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

बालेसर ईमानदार और होनहार युवक है, परन्तु दलित होने के कारण उसे शोषण का शिकार होना पड़ रहा है। विभाग के प्रशासनिक अधिकारी साजिश करके उसे काम से निकलवाना चाहते हैं। उस पर कई प्रकार के आरोप लगाते हैं। उसकी कार्य क्षमता और योग्यता को उचित सम्मान नहीं मिलता। उच्च वर्ग के अधिकारी उसके साथ जातिगत भेदभाव करते हैं तथा उसे आगे बढ़ने के अवसरों से वंचित रखते हैं।

केवल नौकरी प्राप्त कर लेना ही रोज़गार की समस्या का समाधान नहीं है, बल्कि कार्यस्थल पर समान अधिकार, सम्मान, सुरक्षा और पदोन्नति के अवसर मिलना भी आवश्यक है। जातिगत मानसिकता के कारण दलित कर्मचारियों को मानसिक उत्पीड़न और सामाजिक अपमान सहना पड़ता है।

यह उपन्यास रोज़गार की समस्या के साथ-साथ सरकारी कार्यालयों में व्याप्त जातिवाद, शोषण, सामाजिक असमानता और प्रशासनिक भ्रष्टाचार को उजागर करता है। लेखक ने संदेश दिया है कि समाज में वास्तविक समानता स्थापित करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी जातिगत भेदभाव के समान अवसर और सम्मान मिलना चाहिए।

बीज शब्द: अभिशाप, आर्थिक, आजीविका, कूटनीतिक, पुनर्स्थापित, पक्षपात

आलेख:

व्यक्ति का चहुँमुखी विकास और उन्नति रोज़गार पर निर्भर है। रोज़गार के बिना व्यक्ति अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाता। बेरोज़गार इंसान घुट-घुट कर जीता है, उसे जीवन में अनेक प्रकार की कठिनाइयों से जूझना पड़ता है। बेरोज़गारी अभिशाप है, विशेषकर दलितों के लिए, क्योंकि खानपान की उन्हें कहीं से कोई सहायता नहीं मिलती, लोग उसे अस्पृश्य कह कर दुत्कार देते हैं।

उपन्यासकार गिरिराज किशोर के उपन्यास 'यथा प्रस्तावित' में दलित बालेसर चतुर्थ श्रेणी का कर्मचारी है। वह अपने विभागीय कर्तव्य अच्छे ढंग से निभाता है, परन्तु दलित होने के कारण उसे परेशान किया जाता है और उसकी सेवाओं को स्थायी नहीं किया जाता। वह अपने उच्च अधिकारी से विनम्र निवेदन करते हुए अपनी आर्थिक और रोज़गार संबंधी समस्या का वर्णन करता है, वह कहता है–

"मैं दो साल से दैनिक वेतन पर काम कर रहा हूँ। मेरे पास न ज़मीन है और न जानवर। कुल मिलाकर यही कह सकता हूँ कि पेट पालने का कोई सहारा नहीं। सिर्फ यह दैनिक वेतन ही मेरा, मेरी घरवाली का और मेरे बूढ़े माँ-बाप के गुज़ारे का सहारा है। श्रीमान जी से यही प्रार्थना है कि मेरे काम के बारे में पूरी पूछताछ करके मेरी सेवाएँ नियमित कर दें।"[1]

इस छोटी-सी नौकरी के अतिरिक्त उसके पास जीने का कोई सहारा नहीं है। आजीविका को चलाने के लिए बालेसर अनेक प्रकार के संकटों से जूझता है। वह वेतन में बढ़ोतरी भी चाहता है, क्योंकि छोटी रकम से वह परिवार के सभी खर्चों को पूरा नहीं कर पाता।

बालेसर ईमानदार और होनहार युवक है परन्तु दलित होने के कारण शोषण का शिकार हो रहा है। विभाग के प्रशासनिक अधिकारी साज़िश करके उसे काम से निकलवाना चाहते हैं और उस पर आरोप लगाते हैं कि–

"वह ड्यूटी पर ही नहीं आता। कामचोर और उद्दंड है। चिट्ठियाँ दो तो लेता नहीं। जाँच में उस पर लगाए गए सब आरोप सही पाए गए, उसे सफाई का मौका दिया गया, पर वह तो अपने को लाट साहब समझता है... उसे नौकरी की क्या ज़रूरत।"[2]

इस तरह से प्रशासन बार-बार बालेसर पर आरोप लगा रहा है कि वह अधिकारियों, अन्य कर्मचारियों के आदेशों और विभाग द्वारा निर्धारित अपने कर्तव्यों का ठीक ढंग से पालन नहीं कर रहा। दलित बालेसर अनेक प्रकार के षड्यंत्रों और कूटनीतिक आरोपों का शिकार होकर कुंठित होता जा रहा है। फिर भी सवर्ण कर्मचारी और अधिकारी उस पर व्यंग्य करते रहते हैं और उसका शोषण करते रहते हैं।

रोज़गार के हाथों दुःखी बालेसर का दलित परिवार पड़ोसियों से भी पीड़ित होने लगा है। पहले-पहले जब बालेसर के पड़ोसियों को उसकी जाति का पता नहीं था तब ठीक था, परन्तु जब से उसकी जाति का पता चला है पड़ोस में उसके परिवार को घृणा की दृष्टि से देखा जाने लगा है। गाँवों में तो दलितों को जाति के कारण घृणा से देखा ही जाता था, शहरों में भी यह घृणा झेलनी पड़ती है। बालेसर की घरवाली पति से कहती है–

"जब से इन नासपीटों को जात का पता चला, तब से चाहते हैं हम छोड़कर भाग जाएँ पर जाएँ कहाँ? वहाँ गए थे तो सब कुछ खोकर यहीं शरण मिली थी। जात छिपाकर कहीं चले भी जाएँ तो पैसा कहाँ से लाएँ।"[3]

बालेसर का भी कहना है कि जब से उसके सहकर्मियों को यह पता चला है कि वह दलित है तभी से उनका बर्ताव बिल्कुल बदल चुका है। उसे तंग किया जाने लगा है। उसका भी मन करता है कि इस स्थान को हमेशा-हमेशा के लिए छोड़कर किसी ऐसे स्थान पर बसेरा कर ले जहाँ वह ऐसे अपमान से बच सके। परन्तु न आसानी से रोज़गार मिलता है, न आवास। दोनों समस्याएँ परस्पर जुड़ी हुई हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि वह दलित पड़ोसियों से परेशान होकर कहीं चला जाए तो कब तक भागता रहेगा। जाति का पता चलने पर रोज़गार की समस्या खड़ी हो जाती है। यदि आय के साधन न हों तो गुज़र-बसर कैसे चलेगा? कहीं जाया भी नहीं जा सकता। स्थिति यह है कि इस दलित परिवार के लिए एक तरफ खाई है तो दूसरी तरफ कुआँ।

बालेसर के प्रति लगे आरोपों से चिढ़कर उसके स्थायी किए जाने के प्रार्थना पत्र पर बड़े दफ़्तर का सहायक बाबू अपनी टिप्पणी में लिखता है–

"श्री बालेसर दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी हैं, जिन्हें सात रुपए पच्चीस पैसे प्रतिदिन के हिसाब से दैनिक वेतन मिलता है। इनका पत्र इनके कार्य और इनकी हैसियत की सीमाओं का उल्लंघन करता हुआ महसूस होता

है। श्री बालेसर को कोई अधिकार नहीं कि यह प्रशासन जैसी पवित्र व्यवस्था की आलोचना इस शब्दावली में करें।"[4]

बालेसर चतुर्थ श्रेणी का कर्मचारी है जिसके विरुद्ध ऐसी टिप्पणी द्वारा उसके मौलिक अधिकारों का हनन कर दिया जाता है। उसे मानो अपने पर लगे आरोपों के प्रति टिप्पणी करने और अपनी दयनीय स्थिति के प्रति विनम्र निवेदन करने का भी अधिकार नहीं है। अफ़सर तक जाने वाले उसके निवेदन पत्र पर दफ़्तर का सहायक बाबू ऐसी टिप्पणी लिख देता है कि अफ़सर चाहकर भी बालेसर की मदद नहीं कर पाता। उसके निवेदन पत्र पर बालेसर अपने पक्ष में कुछ साक्ष्य और स्पष्टीकरण प्रस्तुत करके अपनी निलंबित सेवाओं को पुनर्स्थापित करवाने के लिए निवेदन करता है, परन्तु संबंधित अधिकारी द्वारा कह दिया जाता है कि बालेसर को इस प्रकार की शब्दावली लिखने का अधिकार नहीं है।

इस तरह कहा जा सकता है कि साज़िश के तहत विभाग में बालेसर को अपमानित किया जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप वह कुंठाग्रस्त हो गया है। संबंधित कर्मचारी उसके अवकाश वाले प्रार्थना पत्र तक को स्वीकार नहीं करते, बल्कि मानवीय सहानुभूति की बजाय नियमों के आधार पर उसके अवकाश के निवेदन को नकार देते हैं। उदाहरण देखें–

"डेलीवेज लेबर के लिए किसी तरह की भी छुट्टी देने का कोई विधान नहीं। छुट्टी संबंधी नियम उन्हीं पर लागू होते हैं जो विभाग के नियमित कर्मचारी हैं। श्री बालेसर इस वर्ग में नहीं आते। श्री बालेसर के पिता की मृत्यु का संस्था को हार्दिक खेद है परन्तु इस आधार पर नियमों में परिवर्तन करने का कोई प्रावधान नहीं।"[5]

क्या जातिगत भेदभाव और जातिगत घृणा के कारण दलित कर्मचारी के साथ इतना क्रूर होना मानवीय है? माना कि डेलीवेज लेबर को छुट्टी नहीं दी जा सकती, पर क्या सभी कर्मचारियों के लिए ऐसे ही अवकाश न देने का प्रावधान है? अथवा दलित होने के कारण ही बालेसर के लिए ऐसे किसी अवकाश की कोई सुविधा नहीं? संभव है यदि वह सवर्ण जाति का होता तो उसके लिए अवकाश का कोई प्रावधान निकाल लिया जाता।

ऐसी स्थिति में भी कैसी विडंबना है कि बालेसर को पिता की मृत्यु के बावजूद छुट्टी नहीं मिल रही। क्रूरता यह है कि उसके अधिकारी उसके साथ हमदर्दी से पेश नहीं आते, केवल मौखिक खेद व्यक्त करके रह जाते हैं। दलित बालेसर के प्रति उनका यह व्यवहार दफ़्तरी हो सकता है, मानवीय नहीं। उसके लिए तो सवर्ण कर्मचारियों द्वारा रुकावटों, छल-कपटपूर्ण षड्यंत्र और कूटनीति के जाल बिछाए गए हैं, जिससे उसका मानसिक संतुलन बिगड़ रहा है।

बालेसर को यह संदेह है कि उसके साथ जो उम्मीदवार बतौर डेलीवेजर (दैनिक वेतनभोगी) भर्ती हुए थे, उनकी सेवाएँ नियमित हैं, केवल वही डेलीवेजर बना रह गया है। इसी संदेह के आधार पर उसने निवेदन किया है, जिससे सवर्ण सहयोगी चिढ़ गए हैं। जब उसने अपने साथ नियुक्त सभी की नौकरी की सत्यता की जाँच करनी चाही तो सभी संबंधित विभागीय कर्मचारी अगर-मगर करने लगे। कई बार लिखित रूप में निवेदन किया, कई बार व्यक्तिगत रूप से भी कहा परन्तु कभी कहते हैं कि पुराना रिकॉर्ड है, ढूँढने में देर लग सकती है, जबकि कभी वे स्वयं ही वहाँ से गायब हो जाते हैं।

"इसी बीच मैंने दफ़्तर से यह रिपोर्ट माँग ली थी कि 1962 और 1964 के बीच कितने दैनिक वेतन कर्मचारी भर्ती किए गए थे और उनमें से कितनों की सेवाएँ नियमित की गईं। लेकिन उस रिपोर्ट के बारे में किसी ने ज़रा भी साँस नहीं ली।"[6]

ये सवर्ण कर्मचारी दलित कर्मचारी को प्रोन्नत और खुशहाल नहीं देखना चाहते। इनमें दलितों के प्रति वैमनस्य की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। जब कनिष्ठ अधिकारियों से पर्याप्त निवेदन करने पर भी उन्होंने उसकी सेवाओं को नियमित करवाने में कोई सहयोग नहीं दिया, तब बालेसर अपनी सेवाओं को नियमित करवाने के लिए स्वयं ही सहायक प्रशासन अधिकारी के पास जा पहुँचा कि उनके अधीनस्थ कर्मचारी बालेसर के मामले में सहयोग नहीं दे रहे।

तब उसे इस वास्तविकता का पता चला कि विभाग के कनिष्ठ अधिकारी बालेसर के विरुद्ध उच्च अधिकारियों को उकसाते रहे हैं और बालेसर की सेवाओं के प्रति असंतोष प्रकट करते रहे हैं। स्थिति यह है कि एक कनिष्ठ अधिकारी तो उसके विरुद्ध उच्च अधिकारी को भड़काते हुए कहता है–

"सर, बालेसर की सेवाएँ नियमित हो जाने के बाद मैंने उसे अपने ही अनुभाग में रख लिया था जिससे उसे कोई परेशान न कर सके। थोड़े दिन तो उसने ठीक काम किया फिर जानबूझकर बदमाशी शुरू कर दी, जानबूझकर लोगों के खाने-पीने के बर्तन छू लेता था।"[7]

इतने से ही स्पष्ट हो जाता है कि यह कनिष्ठ अधिकारी बालेसर के पक्ष में नहीं है, वह नहीं चाहता कि कोई दलित कर्मचारी सवर्णों में रह कर काम करे, उनके बर्तनों को छुए, जिससे कि उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचे। इसी अस्पृश्यता की भावना और जातिगत भेदभाव के कारण कनिष्ठ अधिकारी सहायक प्रशासन अधिकारी को स्पष्टीकरण देता हुआ कहता है कि बालेसर नियमित होकर भी अपनी सेवाएँ ठीक ढंग से पूरी नहीं करेगा, न ही उसके बोलचाल और बर्ताव का ढंग अच्छा रहेगा क्योंकि वह जानबूझकर घटिया हरकतें करने लगा था–एक अछूत होने के बावजूद दूसरों के बर्तनों को छू लेता था।

उपन्यासकार यहाँ बालेसर के माध्यम से स्पष्ट कर रहा है कि दलित कर्मचारियों के खिलाफ़ प्रायः षड्यंत्र रचे जाते हैं। उन्हें सेवा में नियमित न करके परेशान किया जाता है। प्रशासन और अन्य कर्मचारियों द्वारा उन पर झूठे आरोप लगाए जाते हैं। पर्याप्त समय तक बतौर दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी के रूप में कार्य कर चुके दलित कर्मचारियों की नौकरी को नियमित करवाने की ओर कोई ध्यान नहीं देता। अंततः इस शोषित दलित कर्मचारी के विषय में गिरिराज किशोर उच्च अधिकारी के माध्यम से टिप्पणी करते हुए कहते हैं–

"श्री बालेसर पिछले दो वर्षों से भी अधिक समय से दैनिक वेतन पर काम कर रहे हैं। किसी भी व्यक्ति और उसके परिवार के प्रति इससे बड़ा अन्याय क्या हो सकता है कि वह अनिश्चित काल तक अधर में लटका रहे।"[8]

कैसी विडंबना है कि सभी इंसान पाँच तत्वों से बने हुए हैं परन्तु जातिगत छुआछूत और भेदभाव की भावनाओं ने व्यक्ति को जानवर से भी बदतर बना दिया है। इसी घृणा भाव के कारण बालेसर के बाद नियुक्त हुए दैनिक वेतन भोगी उससे पहले ही रेगुलर कर दिए गए। स्पष्ट है कि बालेसर के साथ बहुत अन्याय हुआ है। वह ही एक अभागा व्यक्ति है जो इस विभाग में गंभीर समस्याओं का सामना कर रहा है। बालेसर के प्रति उच्च अधिकारी की टिप्पणी है कि–

"यदि बालेसर के कार्यकाल को भी ध्यान में रखा गया होता तो कभी ऐसा न हुआ होता। जितने लोग इस बीच रेगुलर किए गए उनमें श्री बालेसर का दैनिक वेतन पर कार्य करने का सबसे लंबा सेवाकाल है।"[9]

विभाग के अधिकारी का महत्वपूर्ण कथन यह है कि–

"यदि श्री बालेसर की सेवाएँ नियमित कर दी जाती हैं तो किसी के भी हितों पर आघात नहीं पहुँचेगा। इससे अन्य लोगों के मन में प्रशासन के प्रति आस्था बढ़ेगी।"[10]

कैसी विडंबना है कि उच्च अधिकारी के हस्तक्षेप के बाद ही बालेसर के अधिकारी टिप्पणियाँ लिखते हैं कि बालेसर को न्याय देने से किसी अन्य कर्मचारी को कोई नुकसान नहीं होगा। अब तो विभाग के कई वरिष्ठ अधिकारी बालेसर की सेवाओं के नियमित होने पर उसके प्रति सहानुभूतिपूर्ण हो जाते हैं और चर्चा करते हुए कहते हैं–

"अगर बालेसर की सेवाएँ दो-चार महीने पहले नियमित हो गई होतीं तो हो सकता था बालेसर के बूढ़े माँ-बाप बच गए होते और उसकी गर्भवती पत्नी को भी इतना कष्ट न भोगना पड़ा होता। अगर माँ-बाप न भी बचते तो कम से कम उसे यह संतोष तो रहता कि दवा खाकर मरे।"[11]

निदेशक महोदय के आदेशों के पालन में विभागाध्यक्ष ने इस संपूर्ण प्रकरण पर एक लंबा नोट टाँक दिया था, जो पत्रावली पर लगा था। उन्होंने लिखा था कि–

"श्री बालेसर दो वर्षों से अधिक दैनिक वेतन पर क्यों रहा जबकि उसके बाद भर्ती होने वाले लोग पहले स्थायी नौकरी पा गए? क्या किसी को यह महसूस नहीं हुआ कि उसका और उसके बच्चों का बूँद-बूँद रक्त हरदम इसके पेट की आग से जल रहा है।"[12]

यदि वह समय रहते नियमित हो जाता तो अपने माता-पिता की हारी-बीमारी का इलाज संतोषजनक ढंग से करवा सकता था। अपने पितृ ऋण की पूर्ति कर सकता था। उसकी पत्नी को दुःखों का सामना न करना पड़ता। क्या कारण है कि बालेसर के साथ इस प्रकार का भेदभाव किया गया? उसने क्या पाप किए हैं कि कदम-कदम पर शोषण और अपमान का शिकार होता रहा? उसके बाद नियुक्त हुए सभी कर्मचारी रेगुलर हो गए परन्तु कभी किसी अधिकारी को यह अहसास ही नहीं हुआ कि उसके बच्चे भुखमरी के शिकार हो रहे हैं।

विभागाध्यक्ष ने निदेशक को एक पत्र अलग से भी भेजा था–

"दरअसल बालेसर की नियुक्ति के दो-चार दिन पहले राम सुमेर नाम के एक और आदमी की मौलिक पद पर नियुक्ति हुई थी। राम सुमेर मौलिक नियुक्ति के दो-तीन माह पूर्व ही दैनिक वेतन पर भर्ती हुआ था। ठीक एक वर्ष बाद उसको स्थायी कर दिया गया था, क्योंकि संबंधित सहायक और सहायक प्रशासन अधिकारी, राम सुमेर की औरत के साथ संयुक्त रूप से संभोग करते हैं।"[13]

पत्र में लगाया गया यह एक घृणित किस्म का आरोप था। परन्तु कहीं न कहीं कोई सत्य अवश्य रहा होगा, नहीं तो जो राम सुमेर के प्रति ईर्ष्या के कारण शिकायत के रूप में विभागाध्यक्ष तक भेजा गया था, केवल चार दिवस पूर्व नियुक्त हुए राम सुमेर के एक वर्ष बाद ही रेगुलर हो जाने के पीछे राम सुमेर की बालेसर से अधिक योग्यता नहीं थी। संभव है कि उसकी पत्नी के साथ सहायक और सहायक प्रशासन अधिकारी के अवैध संबंध रहे हों। सरकारी विभागों में प्रोन्नति के लिए यदि इस प्रकार का भ्रष्टाचार और यौन शोषण हो रहा है तो यह चिंता का विषय है।

संभव है प्रोन्नति के कारण राम सुमेर सभी सहकर्मचारियों की आँखों का काँटा बन गया हो। विभागाध्यक्ष ने इस शिकायती पत्र की एक प्रति सुमेर की पत्रावली से प्राप्त करके निदेशक महोदय को संबोधित अपने पत्र के साथ नत्थी कर दी जबकि–

"निदेशक महोदय ने उस पत्र पर यह लिखकर वापस कर दिया था कि इस प्रकार के आरोपों की ओर ध्यान देना कीचड़ उछालना होगा, अतः मैं यह आदेश देता हूँ कि इस बात के पीछे कोई सत्यता नहीं है।"[14]

निदेशक ने यह तो घोषित कर दिया कि कुछ अज्ञात कर्मचारियों द्वारा विभागाध्यक्ष को शिकायत करना निराधार है, ऐसी शिकायत में किसी भी प्रकार का तर्क और जवाज़ियत नहीं है, इसलिए इस विषय को उछालना ठीक नहीं। परन्तु बालेसर के मामले में उच्च अधिकारी भी तमाशबीन बने रहते हैं। बालेसर के

साथ हो रहे अन्याय और उसके प्रति पक्षपात का कारण जानते हैं फिर भी उसकी पदोन्नति होने में रुकावट बने रहते हैं। क्या इसी कारण कि वह एक दलित कर्मचारी है? दलितों के प्रति उच्च अधिकारियों के रवैये पर गिरिराज किशोर की टिप्पणी देखें–

"उच्चतम अधिकारी हाथ पर हाथ रखकर असहाय तमाशबीन की तरह सब कुछ होते देख रहे हैं। प्रशासन का यही रुख लोगों के मन में वैमनस्य का भाव जगा देता है।"[15]

प्रशासन की छवि को साफ़-सुथरा दिखाने के लिए सहायक प्रशासन अधिकारी को निलंबित कर दिया जाता है। सहायक प्रशासन अधिकारी के लिए दिए आदेश के साथ एक पत्र बालेसर का भी लगा था जिसमें बालेसर ने अपने निलंबन के विरुद्ध सहायक प्रशासन अधिकारी को लिखा था कि उसने उसकी सेवाओं के विषय में जो निर्णय लिया है वह अवैध है, एक अपराध पर दो दंड देना वाजिब नहीं, यह तो ज़्यादती है। स्पष्ट है कि दलित बालेसर को अपने रोज़गार की सुरक्षा के लिए उच्च अधिकारियों तक जाना पड़ता है, सहायक और सहायक प्रशासन अधिकारी के विरुद्ध संघर्ष करना पड़ता है। कैसी विडंबना है कि लोग जातिवाद के कारण दलितों के प्रति घृणा और द्वेष भरा व्यवहार कर रहे हैं, मानव मूल्यों को भ्रष्ट कर रहे हैं, अमानवीय व्यवहार कर रहे हैं। मानो लेखक 'सत्यमेव जयते' सिद्धांत को सार्थक सिद्ध करना चाहता हो, अन्यथा कई दलित अन्याय के दमनचक्र में पिस रहे हैं।

संदर्भ सूची (References)

1. गिरिराज किशोर, 'यथा प्रस्तावित', पृ. 26
2. वही, पृ. 11
3. वही, पृ. 36
4. वही, पृ. 44
5. वही, पृ. 48
6. वही, पृ. 51
7. वही, पृ. 57
8. वही, पृ. 58
9. वही, पृ. 59
10. वही, पृ. 60
11. वही, पृ. 61
12. वही, पृ. 66
13. वही, पृ. 72
14. वही, पृ. 72
15. वही, पृ. 90